

ग्रामीण क्षेत्रों में शिशुओं एवं छोटे बच्चों के पूरक आहार व्यवहार को प्रभावित करने वाले कारक – एक समीक्षात्मक अध्ययन

मीनू शर्मा

<https://doi.org/10.61410/had.v21i3.348>

सारांश

बाल्यावस्था के प्रारम्भिक वर्षों में मिलने वाला पोषण बच्चे की वृद्धि, प्रतिरक्षा, मस्तिष्कीय विकास तथा उसकी समग्र स्वास्थ्य स्थिति को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण आधार है। शिशु के जीवन के प्रथम छह माह में स्तनपान उसकी पोषण आवश्यकताओं की पूर्ति में केंद्रीय भूमिका निभाता है। लगभग छह माह की आयु के बाद बच्चे की शारीरिक वृद्धि के साथ ऊर्जा एवं पोषक तत्वों की आवश्यकता में वृद्धि होती है। इस अवस्था में स्तनपान को जारी रखते हुए बच्चे की आयु, विकासात्मक अवस्था और पोषण संबंधी आवश्यकताओं के अनुरूप उपयुक्त पूरक आहार देना आवश्यक हो जाता है। ग्रामीण परिवारों में पूरक आहार से संबंधित निर्णय और व्यवहार अनेक परिस्थितियों के संयुक्त प्रभाव का परिणाम होते हैं। परिवार में उपलब्ध भोजन की मात्रा मात्र यह निर्धारित नहीं करती कि बच्चे को कैसा आहार प्राप्त होगा। माता की शैक्षिक पृष्ठभूमि, पोषण संबंधी समझ, परिवार की आर्थिक स्थिति, खाद्य पदार्थों की उपलब्धता एवं विविधता स्थानीय भोजन परंपराएँ, पारिवारिक विश्वास, माता की दैनिक व्यस्तताएँ, स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच तथा परिवार के सदस्यों से मिलने वाला सहयोग भी इस प्रक्रिया को प्रभावित करता है। इसी संदर्भ में प्रस्तुत समीक्षात्मक अध्ययन का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में शिशुओं के पूरक आहार व्यवहार को प्रभावित करने वाले प्रमुख सामाजिक, आर्थिक, पारिवारिक एवं पोषण संबंधी कारकों का उपलब्ध साहित्य के आधार पर विवेचन करना है। अध्ययन से यह निष्कर्ष सामने आता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में पूरक आहार संबंधी सुधार के लिए ऐसी रणनीतियों की आवश्यकता है जो केवल सूचना देने तक सीमित न रहें, बल्कि परिवार की वास्तविक परिस्थितियों को ध्यान में रखें। स्थानीय स्तर पर उपलब्ध एवं अपेक्षाकृत कम लागत वाले पौष्टिक खाद्य पदार्थों के उचित उपयोग, व्यवहारिक पोषण परामर्श, परिवार के सहयोग तथा आंगनवाड़ी एवं स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के निरंतर मार्गदर्शन को इस दिशा में उपयोगी माना जा सकता है। अतः शिशुओं के लिए प्रभावी पूरक आहार को बढ़ावा देने हेतु पोषण शिक्षा के साथ सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों को भी समान महत्व देना आवश्यक है। भविष्य के अध्ययनों में ग्रामीण परिवारों की स्थानीय खाद्य परंपराओं, व्यवहारगत बाधाओं तथा उपलब्ध पोषण सेवाओं की भूमिका का क्षेत्र-विशिष्ट अध्ययन किया जाना उपयोगी रहेगा।

प्रमुख शब्द – शैशवावस्था, पूरक आहार, 6–24 माह, शिशु पोषण, ग्रामीण परिवार, मातृ पोषण ज्ञान, खाद्य विविधता, आहार व्यवहार, पोषण शिक्षा, बाल स्वास्थ्य।

परिचय

शिशु का जीवन के प्रारम्भिक वर्ष उसके भविष्य के स्वास्थ्य एवं विकास की नींव रखते हैं। इस अवधि में पर्याप्त एवं संतुलित पोषण शारीरिक वृद्धि, मस्तिष्क के विकास, प्रतिरक्षा क्षमता तथा संक्रमणों से सुरक्षा के लिए आवश्यक है। शिशु के जन्म के बाद स्तनपान महत्वपूर्ण पोषण स्रोत है। लगभग छह

- असिस्टेंट प्रोफेसर, गृहविज्ञान विभाग, सौभाग्यवती बाई दानी महिला महाविद्यालय, धामपुर।

माह की आयु के बाद शिशु की ऊर्जा एवं पोषक तत्वों की आवश्यकताएँ बढ़ने लगती हैं। इस अवस्था में स्तनपान जारी रखते हुए शिशु को आयु एवं विकास की अवस्था के अनुरूप अतिरिक्त खाद्य पदार्थ दिए जाने की आवश्यकता होती है। इसी प्रक्रिया को पूरक आहार कहा जाता है। पूरक आहार केवल किसी नए खाद्य पदार्थ को बच्चे के आहार में शामिल करने की प्रक्रिया नहीं है। इसमें भोजन की शुरुआतका समय, भोजन की मात्रा, आवृत्ति, खाद्य विविधता, बनावट, स्वच्छता तथा शिशु की भूख एवं आवश्यकता के अनुसार उत्तरदायी ढंग से भोजन कराना शामिल है। ग्रामीण क्षेत्रों में यह प्रक्रिया अनेक परिस्थितियों से प्रभावित होती है। परिवार की आय सीमित होने पर पौष्टिक एवं विविध खाद्य पदार्थों की नियमित उपलब्धता कठिन हो सकती है। इसके अतिरिक्त मातृ शिक्षा, पोषण संबंधी जानकारी, परिवार की परंपराएँ तथा स्थानीय खाद्य आदतें भी शिशु के आहार को प्रभावित कर सकती हैं। इसलिए पूरक आहार व्यवहार को समझने के लिए केवल पोषण संबंधी आवश्यकताओं का अध्ययन पर्याप्त नहीं है। इसके सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और व्यवहारगत निर्धारकों को भी समझना आवश्यक है।

पूरक आहार का उपयुक्त समय

शिशु के प्रारम्भिक जीवन में पोषण उसकी वृद्धि और विकास की आधारभूत आवश्यकता है। जन्म के बाद लगभग छह माह तक माँ का दूध शिशु के लिए पोषण का प्रमुख माध्यम होता है और सामान्यतः स्वस्थ शिशु की आवश्यकता की पूर्ति के लिए पर्याप्त माना जाता है [1]। इसी आधार पर अमेरिकन एकेडमी ऑफ पीडियाट्रिक्स लगभग छह माह की आयु तक केवल स्तनपान कराने की सिफारिश करती है। यदि किसी कारणवश माँ का दूध उपलब्ध नहीं हो पाता है, तो शिशु की आयु तथा व्यक्तिगत आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए उपयुक्त फार्मूला दूध का प्रयोग किया जा सकता है [2]। छह माह के आसपास शिशु के शरीर में तीव्र वृद्धि और विकास की प्रक्रिया जारी रहती है, जिसके परिणामस्वरूप ऊर्जा तथा विभिन्न पोषक तत्वों की आवश्यकता पहले की अपेक्षा बढ़ जाती है। इस अवस्था में केवल स्तनपान से बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति करना कठिन हो सकता है। इसलिए स्तनपान को बंद करने के बजाय उसे जारी रखते हुए बच्चे के आहार में अन्य उपयुक्त खाद्य पदार्थों को क्रम से सम्मिलित किया जाता है। स्तनपान के साथ इस प्रकार अतिरिक्त खाद्य पदार्थों को आहार में शामिल करने की प्रक्रिया को पूरक आहार कहा जाता है [1]। पूरक आहार की शुरुआत कब की जाए, यह शिशु के पोषण और स्वास्थ्य से जुड़ा महत्वपूर्ण विषय है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने जीवन के प्रथम छह माह तक केवल स्तनपान कराने तथा छह माह के बाद उपयुक्त पूरक आहार प्रारम्भ करने के साथ स्तनपान जारी रखने की अनुशंसा करता है [3]। दूसरी ओर यूरोपियन सोसाइटी फॉर पीडियाट्रिक गैस्ट्रोएंटरोलॉजी, हेपेटोलॉजी एंड न्यूट्रिशन के अनुसार पूरक आहार 17 सप्ताह की आयु से पहले प्रारम्भ नहीं किया जाना चाहिए और 26 सप्ताह के बाद इसकी शुरुआत में अनावश्यक विलंब भी नहीं होना चाहिए। पूरक आहार के लिए शिशु की तैयारी केवल उसकी आयु से निर्धारित नहीं होती, बल्कि उसके शारीरिक विकास से भी संबंधित होती है। लगभग छह माह के आसपास पाचन तंत्र और गुर्दों की कार्यक्षमता में अपेक्षित परिपक्वता आने लगती है। इसी अवधि में शिशु सिर और गर्दन को अधिक स्थिर रखने, भोजन को मुँह तक ले जाने, उसे मुँह में ग्रहण करने तथा चबाने और निगलने जैसी आवश्यक क्षमताएँ विकसित करता है। ये परिवर्तन शिशु को दूध के अतिरिक्त अन्य खाद्य पदार्थों को ग्रहण करने के लिए तैयार करने में सहायक होते हैं [4]। इस प्रकार पूरक आहार को केवल छह माह

के बाद दिया जाने वाला अतिरिक्त भोजन मानना पर्याप्त नहीं है। यह शिशु की बदलती पोषण आवश्यकताओं के अनुरूप आहार में क्रमिक परिवर्तन की एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है।

ग्रामीण भारत के संदर्भ में पोषण का विशेष महत्व

- भारत शैशवावस्था, शिशु के जीवन की वह अवस्था है, जिसमें स्तनपान के साथ-साथ अन्य खाद्य पदार्थों की आवश्यकता निरंतर बढ़ने लगती है। ग्रामीण क्षेत्रों में इस आयु वर्ग के बच्चों के पोषण को समझते समय केवल परिवार की आय अथवा आर्थिक संसाधनों को आधार बनाना पर्याप्त नहीं है। शिशु को किस प्रकार का भोजन प्राप्त होता है, यह माता की पोषण संबंधी समझ, परिवार की खाद्य व्यवस्था, घरेलू एवं कृषि संबंधी कार्यों, पारिवारिक सहयोग, स्थानीय खान-पान की परंपराओं तथा स्वास्थ्य एवं पोषण सेवाओं की उपलब्धता जैसे अनेक सामाजिक और व्यवहारिक पहलुओं से जुड़ा होता है। इस दृष्टि से ग्रामीण परिवेश में पूरक आहार को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में समझना आवश्यक है, जिस पर कई परस्पर जुड़े हुए कारकों का प्रभाव पड़ता है।
- ग्रामीण परिवारों में भोजन की व्यवस्था स्थानीय संसाधनों और उपलब्ध आजीविका साधनों से काफी हद तक संबंधित हो सकती है। कृषि तथा पशुपालन से जुड़े परिवारों में अनाज, दालें, दूध, हरी सब्जियाँ, मौसमी फल और अन्य स्थानीय खाद्य पदार्थ उपलब्ध हो सकते हैं। फिर भी किसी खाद्य पदार्थ का घर में उपलब्ध होना अपने आप में शिशु के संतुलित पोषण की गारंटी नहीं देता। बच्चे की आयु और विकासात्मक अवस्था के अनुरूप भोजन की मात्रा, उसकी विविधता, पोषक गुणवत्ता तथा उपयुक्त बनावट भी महत्वपूर्ण होती है। इसके अतिरिक्त, परिवार में प्रचलित भोजन संबंधी धारणाएँ और पारंपरिक प्रथाएँ भी यह निर्धारित कर सकती हैं कि छोटे बच्चे को कौन-से खाद्य पदार्थ दिए जाएँ और किनसे बचाया जाए।
- शिशु के पूरक आहार व्यवहार में माता की शिक्षा तथा पोषण संबंधी जानकारी की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। पूरक आहार कब आरंभ किया जाए, बच्चे को दिन में कितनी बार भोजन दिया जाए, भोजन में विभिन्न खाद्य समूहों को किस प्रकार सम्मिलित किया जाए तथा भोजन बनाते और खिलाते समय स्वच्छता के कौन-से उपाय अपनाए जाएँ कृश्न विषयों की समझ शिशु के आहार व्यवहार को प्रभावित कर सकती है। दूसरी ओर, ग्रामीण महिलाओं की घरेलू जिम्मेदारियाँ, कृषि कार्य तथा परिवार की अन्य आवश्यकताओं में उनकी भागीदारी कई बार बच्चे को नियमित रूप से भोजन खिलाने के लिए उपलब्ध समय को प्रभावित कर सकती है। इसलिए पोषण संबंधी जानकारी के साथ-साथ उसे व्यवहार में लागू करने की परिस्थितियों को समझना भी आवश्यक है।
- ग्रामीण परिवार की सामाजिक संरचना का प्रभाव भी बच्चे के भोजन संबंधी निर्णयों पर पड़ सकता है। संयुक्त अथवा विस्तारित परिवारों में शिशु के भोजन से संबंधित निर्णयों में माता के अतिरिक्त दादा-दादी तथा परिवार के अन्य सदस्य भी अपनी भूमिका निभा सकते हैं। उनके अनुभव, मान्यताएँ और पारंपरिक धारणाएँ बच्चे के भोजन के चयन तथा खिलाने की पद्धति को प्रभावित कर सकती हैं। अतः पूरक आहार संबंधी पोषण शिक्षा को केवल माता-केंद्रित रखने के बजाय

परिवार के उन सदस्यों को भी शामिल करना उपयोगी होगा, जो शिशु की देखभाल और भोजन व्यवस्था में प्रत्यक्ष रूप से जुड़े हैं।

- ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध स्वास्थ्य एवं पोषण सेवाएँ भी शिशु के पोषण व्यवहार को बेहतर बनाने में सहायक हो सकती हैं। आंगनवाड़ी कार्यकर्ता और आशा कार्यकर्ता परिवारों को शिशु एवं छोटे बच्चों के पोषण, वृद्धि की निगरानी, स्वास्थ्य, स्वच्छता तथा उचित आहार व्यवहार के संबंध में आवश्यक जानकारी और मार्गदर्शन प्रदान कर सकती हैं। इन सेवाओं की पहुँच, नियमित संपर्क तथा परिवारों द्वारा उपलब्ध सुविधाओं का उपयोग पूरक आहार से संबंधित व्यवहारों को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण पहलू हैं। इसलिए ग्रामीण बाल पोषण के अध्ययन में सामुदायिक स्तर पर उपलब्ध सेवाओं की भूमिका को भी उचित महत्व दिया जाना चाहिए।
- शिशु के भोजन की पोषणीय गुणवत्ता के साथ उसकी सुरक्षा और स्वच्छता भी समान रूप से महत्वपूर्ण है। ग्रामीण क्षेत्रों में सुरक्षित पेयजल की उपलब्धता, भोजन तैयार करने की स्वच्छ परिस्थितियाँ, हाथों की सफाई, बर्तनों की स्वच्छता तथा तैयार भोजन का उचित रख-रखाव बच्चे के स्वास्थ्य से सीधे जुड़े हुए पहलू हैं। यदि भोजन पौष्टिक होने के बावजूद अस्वच्छ परिस्थितियों में तैयार या परोसा जाता है, तो संक्रमण का जोखिम बढ़ सकता है और इसका प्रतिकूल प्रभाव बच्चे की स्वास्थ्य एवं पोषण स्थिति पर पड़ सकता है। इसलिए पूरक आहार संबंधी व्यवहार में भोजन की गुणवत्ता के साथ खाद्य एवं व्यक्तिगत स्वच्छता को भी सम्मिलित करना आवश्यक है।
- ग्रामीण भारत में पूरक आहार की चर्चा करते समय स्थानीय खाद्य संसाधनों और सांस्कृतिक संदर्भों को विशेष महत्व दिया जाना चाहिए। प्रत्येक क्षेत्र में उपलब्ध खाद्य पदार्थ, मौसमी विविधता, भोजन पकाने की परंपराएँ और परिवारों की आहार संबंधी आदतें अलग-अलग हो सकती हैं। ऐसी स्थिति में पोषण शिक्षा तभी अधिक व्यावहारिक और स्वीकार्य हो सकती है, जब उसमें स्थानीय स्तर पर आसानी से उपलब्ध, अपेक्षाकृत कम लागत वाले और पोषण की दृष्टि से उपयोगी खाद्य पदार्थों को शामिल किया जाए। परिवारों को केवल क्या खिलाना है यह बताने के साथ-साथ उपलब्ध संसाधनों से पौष्टिक भोजन किस प्रकार तैयार किया जा सकता है, इसकी व्यावहारिक जानकारी देना भी आवश्यक है।

अतः ग्रामीण भारत में 6 से 24 माह के बच्चों के पूरक आहार को केवल भोजन की उपलब्धता अथवा मात्रा के आधार पर नहीं समझा जा सकता। यह मातृ शिक्षा एवं पोषण ज्ञान, घरेलू खाद्य संसाधन, खाद्य विविधता, स्थानीय एवं सांस्कृतिक मान्यताएँ, पारिवारिक सहयोग, महिलाओं की कार्यगत परिस्थितियाँ, स्वास्थ्य एवं पोषण सेवाओं तक पहुँच तथा स्वच्छता संबंधी व्यवहारों से प्रभावित होने वाली एक व्यापक प्रक्रिया है। इन सभी पहलुओं को ध्यान में रखते हुए तैयार की गई स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप पोषण शिक्षा शिशुओं के बेहतर आहार व्यवहार और स्वस्थ विकास को प्रोत्साहित करने में अधिक प्रभावी हो सकती है।

ग्रामीण क्षेत्रों में शिशुओं एवं छोटे बच्चों के पूरक आहार व्यवहार को प्रभावित करने वाले कारक

शिशु के जीवन के प्रथम दो वर्ष वृद्धि, शारीरिक विकास तथा मस्तिष्कीय विकास की दृष्टि से अत्यंत संवेदनशील अवधि होते हैं। विशेष रूप से 6-24 माह की अवस्था में बच्चे की पोषण

आवश्यकताओं में तेजी से परिवर्तन होता है। लगभग छह माह तक माँ का दूध शिशु के लिए प्रमुख पोषण स्रोत रहता है, किंतु इसके बाद बढ़ती ऊर्जा एवं पोषक तत्वों की आवश्यकता को पूरा करने के लिए स्तनपान के साथ अन्य खाद्य पदार्थों को आहार में सम्मिलित करना आवश्यक हो जाता है। इस संक्रमणकालीन अवस्था में दिया जाने वाला भोजन ही पूरक आहार कहलाता है। इसकी गुणवत्ता, विविधता, मात्रा, आवृत्ति तथा सुरक्षित तैयारी बच्चे के समग्र पोषण और विकास से निकटता से जुड़ी होती है [5]। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार लगभग छह माह की आयु से शिशु को स्तनपान के साथ उपयुक्त पूरक आहार दिया जाना चाहिए तथा स्तनपान को दो वर्ष या उससे अधिक समय तक जारी रखा जा सकता है। पूरक आहार की प्रक्रिया में केवल भोजन उपलब्ध कराना पर्याप्त नहीं है, बल्कि भोजन की पोषणीय गुणवत्ता, विविधता, सुरक्षित तैयारी तथा बच्चे की आवश्यकता के अनुरूप खिलाने की पद्धति भी महत्वपूर्ण है [5]। WHO एवं UNICEF के अनुसार 6–23 माह के बच्चों के आहार की विविधता का आकलन करते समय न्यूनतम आहार विविधता एक महत्वपूर्ण संकेतक है। इसके अंतर्गत पिछले 24 घंटों में आठ निर्धारित खाद्य समूहों में से कम-से-कम पाँच समूहों से खाद्य पदार्थ प्राप्त होना अपेक्षित माना जाता है [6]।

भारतीय परिस्थितियों में बच्चों की पोषण आवश्यकताओं को समझने के लिए भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषदद्वाराष्ट्रीय पोषण संस्थान (प्लडट-छप्प) की अनुशंसाएँ महत्वपूर्ण हैं। इन अनुशंसाओं में आयु के अनुरूप ऊर्जा एवं पोषक तत्वों की आवश्यकता तथा संतुलित आहार में विभिन्न खाद्य समूहों के समावेश पर जोर दिया गया है [7]। ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध स्थानीय और मौसमी खाद्य संसाधनों का उचित उपयोग करके बच्चे के पूरक आहार को अधिक पौष्टिक एवं विविध बनाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त ग्रामीण परिवेश की निम्न परिस्थितियाँ भी शिशुओं और बच्चों के पूरक आहार को प्रभावित करती हैं –

1. **सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियाँ**— बच्चे को कब और क्या खिलाया जाए, यह निर्णय कई बार परिवार में लंबे समय से चली आ रही भोजन संबंधी परंपराओं और मान्यताओं से प्रभावित होता है। ग्रामीण समुदायों में स्थानीय खान-पान की संस्कृति, परिवार की धारणाएँ तथा कुछ खाद्य पदार्थों को लेकर बनी मान्यताएँ शिशु के भोजन के चयन को प्रभावित कर सकती हैं। परिणामस्वरूप बच्चे के भोजन में कुछ आवश्यक खाद्य समूहों का पर्याप्त समावेश न हो पाने की संभावना रहती है। परिवार के वरिष्ठ सदस्यों का प्रभाव भी इस संदर्भ में महत्वपूर्ण है। विशेषकर संयुक्त परिवारों में बच्चे के भोजन से संबंधित निर्णयों में दादा-दादी या अन्य बुजुर्ग सदस्यों की भूमिका हो सकती है। इसलिए पोषण शिक्षा को केवल माँ तक सीमित रखने के बजाय उन सभी सदस्यों तक पहुँचाना अधिक प्रभावी होगा, जो बच्चे की देखभाल और भोजन संबंधी निर्णयों में भाग लेते हैं।
2. **आर्थिक स्थिति एवं खाद्य उपलब्धता**— परिवार की आय और खाद्य सुरक्षा की स्थिति बच्चे के पूरक आहार की गुणवत्ता को प्रभावित करने वाली परिस्थितियों में शामिल हैं। आर्थिक संसाधन सीमित होने पर परिवार के लिए भोजन का चयन मुख्यतः लागत और उपलब्धता के आधार पर करना पड़ सकता है। ऐसी परिस्थिति में विभिन्न प्रकार के फल, सब्जियाँ, दूध, अंडे अथवा अन्य पोषक खाद्य पदार्थों को नियमित रूप से बच्चे के भोजन में शामिल करना कठिन हो सकता है। फिर भी संतुलित पूरक आहार के लिए केवल बाजार से खरीदे जाने वाले महंगे खाद्य पदार्थ

आवश्यक नहीं हैं। ग्रामीण परिवारों में उपलब्ध अनाज, दालें, दूध, दुग्ध उत्पाद, मौसमी सब्जियाँ तथा फल आदि का उपयुक्त संयोजन बच्चे के भोजन की विविधता बढ़ा सकता है। फ़डत्-छफ़ की अनुशंसाओं के अनुरूप विभिन्न खाद्य समूहों को उचित अनुपात में शामिल करना पोषण की दृष्टि से अधिक उपयोगी दृष्टिकोण है [7]।

3. **मातृ शिक्षा एवं पोषण ज्ञान**— माँ की शिक्षा और पोषण संबंधी समझ बच्चे के पूरक आहार व्यवहार को दिशा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। पूरक आहार कब शुरू किया जाए, भोजन की बनावट कैसी रखी जाए, कितनी बार खिलाया जाए और भोजन में किन खाद्य पदार्थों को सम्मिलित किया जाएकृइन सभी विषयों की जानकारी बच्चे के आहार व्यवहार को प्रभावित कर सकती है। इसलिए पोषण शिक्षा का उद्देश्य केवल यह बताना नहीं होना चाहिए कि छह माह के बाद पूरक आहार देना है। माताओं को स्थानीय खाद्य पदार्थों से उम्र के अनुकूल पौष्टिक भोजन तैयार करने, भोजन की विविधता बढ़ाने, सुरक्षित तरीके से भोजन बनाने तथा बच्चे की आवश्यकता के अनुसार उसे खिलाने का व्यावहारिक प्रशिक्षण भी दिया जाना चाहिए।^{३८} की अनुशंसाएँ भी पर्याप्तता, विविधता, सुरक्षा और उपयुक्त खिलाने की पद्धति को पूरक आहार के आवश्यक घटकों के रूप में महत्व देती हैं [5]।
4. **खाद्य विविधता**— बढ़ते हुए शिशु की सभी पोषण आवश्यकताओं को एक या दो खाद्य पदार्थों के माध्यम से पूरा करना कठिन होता है। इसलिए बच्चे के भोजन में विभिन्न खाद्य समूहों का समावेश आवश्यक है। खाद्य विविधता बच्चे को ऊर्जा के साथ-साथ प्रोटीन, विटामिन, खनिज एवं अन्य आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध कराने में सहायक होती है। WHO एवं UNICEF द्वारा निर्धारित शिशु एवं छोटे बच्चों के आहार संकेतकों में न्यूनतम आहार विविधता को 6–23 माह के बच्चों के आहार की गुणवत्ता का एक महत्वपूर्ण संकेतक माना गया है [6]। ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध स्थानीय एवं मौसमी खाद्य पदार्थों की सहायता से इस विविधता को बढ़ाया जा सकता है। इसके लिए परिवारों को स्थानीय स्तर पर उपलब्ध पौष्टिक खाद्य विकल्पों की जानकारी देना उपयोगी होगा।
5. **मातृ कार्यभार एवं बच्चे को देने के लिए उपलब्ध समय**— ग्रामीण महिलाओं की दैनिक दिनचर्या में घरेलू कार्यों के अतिरिक्त कृषि, पशुपालन अथवा आय अर्जित करने से जुड़े कार्य भी सम्मिलित हो सकते हैं। कार्यों की अधिकता की स्थिति में बच्चे के लिए भोजन तैयार करने तथा उसे पर्याप्त समय देकर खिलाने में व्यावहारिक कठिनाइयाँ उत्पन्न हो सकती हैं। इस समस्या को देखते हुए ऐसी पूरक आहार विधियों को बढ़ावा देना उपयोगी होगा जिन्हें कम समय में, स्थानीय सामग्री से तथा परिवार की सामान्य दिनचर्या के अनुरूप तैयार किया जा सके। बच्चे की देखभाल में पिता, दादा-दादी और परिवार के अन्य सदस्यों की भागीदारी बढ़ाना भी माँ के कार्यभार को कम करने में सहायक हो सकता है।
6. **स्वास्थ्य एवं पोषण सेवाओं की पहुँच**— ग्रामीण क्षेत्रों में आंगनवाड़ी एवं आशा कार्यकर्ता परिवारों तक पोषण एवं स्वास्थ्य संबंधी संदेश पहुँचाने में महत्वपूर्ण माध्यम हैं। इनके माध्यम से माताओं को स्तनपान, पूरक आहार, बच्चे की वृद्धि, स्वच्छता और स्वास्थ्य देखभाल से संबंधित जानकारी उपलब्ध कराई जा सकती है। नियमित परामर्श तभी अधिक प्रभावी हो सकता है जब वह परिवार

की वास्तविक परिस्थितियों और स्थानीय खाद्य उपलब्धता को ध्यान में रखकर दिया जाए। उदाहरण के लिए, केवल सामान्य पोषण संदेश देने के बजाय स्थानीय खाद्य पदार्थों से बच्चे के लिए उपयुक्त भोजन तैयार करने की विधि समझाना परिवारों के लिए अधिक व्यावहारिक हो सकता है।

7. **भोजन की मात्रा एवं खिलाने की आवृत्ति**— शिशु की आयु बढ़ने के साथ उसकी पोषण आवश्यकताओं में भी परिवर्तन होता है। इसलिए पूरक आहार की मात्रा और भोजन देने की आवृत्ति को बच्चे की उम्र तथा उसकी व्यक्तिगत आवश्यकता के अनुसार धीरे-धीरे बढ़ाना आवश्यक है [5]। भोजन कराते समय बच्चे की भूख, पसंद और स्वीकार्यता को भी ध्यान में रखना चाहिए। जब बच्चा किसी भोजन को तुरंत स्वीकार नहीं करता, तब धैर्यपूर्वक और उचित तरीके से पुनः भोजन देने का प्रयास किया जा सकता है। इस प्रकार बच्चे को खिलाने की प्रक्रिया केवल निश्चित समय पर भोजन देने तक सीमित न होकर उसकी व्यक्तिगत आवश्यकता के अनुरूप होनी चाहिए।
8. **पूरक आहार की पोषणीय गुणवत्ता**— पूरक आहार का पोषण मूल्य केवल उसके नाम या प्रकार से निर्धारित नहीं होता, बल्कि उसमें प्रयुक्त सामग्री, मात्रा, विविधता और तैयार भोजन की बनावट भी महत्वपूर्ण होती है। अत्यधिक पतले अथवा केवल तरल रूप में दिए जाने वाले खाद्य पदार्थों से बच्चे को अपेक्षित ऊर्जा एवं पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में मिलना कठिन हो सकता है। इसलिए बच्चे की विकासात्मक क्षमता के अनुसार उपयुक्त गाढ़ापन तथा पोषक तत्वों से भरपूर खाद्य पदार्थ देना आवश्यक है। स्थानीय स्तर पर उपलब्ध अनाज और दालों के संयोजन के साथ दूध एवं दुग्ध उत्पाद, उपयुक्त सब्जियाँ तथा मौसमी फल शामिल किए जा सकते हैं। इस प्रकार कम लागत वाले स्थानीय खाद्य संसाधनों के माध्यम से भी पूरक आहार की पोषणीय गुणवत्ता में सुधार किया जा सकता है [7]।
9. **स्वच्छता एवं खाद्य सुरक्षा**— शिशु को दिया जाने वाला भोजन पौष्टिक होने के साथ-साथ सुरक्षित भी होना चाहिए। भोजन तैयार करने से पहले हाथों की सफाई, साफ बर्तनों का प्रयोग, सुरक्षित पानी का उपयोग तथा तैयार भोजन को उचित ढंग से रखना आवश्यक है। भोजन एवं पानी की स्वच्छता में कमी से संक्रमण का जोखिम बढ़ सकता है, जिसका प्रभाव बच्चे की स्वास्थ्य एवं पोषण स्थिति पर पड़ सकता है [5]। इसलिए पूरक आहार संबंधी शिक्षा को केवल खाद्य पदार्थों के चयन तक सीमित नहीं रखा जाना चाहिए। इसमें हाथ धोने, सुरक्षित पानी के उपयोग, बर्तनों की स्वच्छता तथा भोजन की सुरक्षित तैयारी एवं भंडारण जैसे व्यवहारों को भी शामिल करना आवश्यक है।
10. **भारत की पोषण स्थिति के संदर्भ में राष्ट्रीय आँकड़े**— भारत में छोटे बच्चों के पोषण एवं आहार संबंधी स्थिति का आकलन करने के लिए राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-5 (NFHS-5), 2019-21 एक महत्वपूर्ण स्रोत है। इसके अनुसार भारत में 6-23 माह आयु के लगभग 11 प्रतिशत बच्चे ही निर्धारित मानकों के अनुसार पर्याप्त आहार प्राप्त कर रहे थे [8]। यह स्थिति इस आयु वर्ग के बच्चों के पूरक आहार की गुणवत्ता एवं पर्याप्तता में सुधार की आवश्यकता को स्पष्ट करती है।

NFHS-5 के अनुसार भारत में पाँच वर्ष से कम आयु के बच्चों में 35.5 प्रतिशत बच्चे stunting] 19.3 प्रतिशत wasting तथा 32.1 प्रतिशत underweight की स्थिति में पाए गए [8]। इन आँकड़ों को केवल पूरक आहार व्यवहार का प्रत्यक्ष परिणाम नहीं माना जा सकता, क्योंकि बाल कुपोषण पर भोजन, संक्रमण, मातृ स्वास्थ्य, सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों और अन्य अनेक कारकों का प्रभाव पड़ता है। फिर भी ये आँकड़े भारत में प्रारंभिक बाल्यावस्था के पोषण पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता बताते हैं।

निष्कर्ष

साहित्य एवं उपलब्ध राष्ट्रीय दस्तावेजों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि 6-24 माह के शिशुओं का पूरक आहार व्यवहार अनेक परस्पर संबंधित कारकों से निर्मित होता है। मातृ शिक्षा और पोषण संबंधी ज्ञान, परिवार की आर्थिक एवं खाद्य सुरक्षा, सामाजिक-सांस्कृतिक मान्यताएँ, खाद्य विविधता, मातृ कार्यभार, परिवार का सहयोग, स्वास्थ्य एवं पोषण सेवाओं की उपलब्धता तथा स्वच्छता संबंधी व्यवहार इस प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। WHO द्वारा निर्धारित सिद्धांतों के अनुसार पूरक आहार में पर्याप्तता, विविधता, सुरक्षा तथा बच्चे की आवश्यकता के अनुरूप खिलाने को महत्व दिया गया है [5]। भारतीय संदर्भ में ICMR-NIN की पोषण संबंधी अनुशंसाएँ भी आयु एवं आवश्यकता के अनुरूप संतुलित तथा विविध आहार के महत्व को रेखांकित करती हैं [7]। वहीं NFHS-5 के आँकड़े छोटे बच्चों में पर्याप्त आहार की वर्तमान स्थिति को सुधारने की आवश्यकता की ओर संकेत करते हैं [8]।

इसलिए ग्रामीण क्षेत्रों में पूरक आहार व्यवहार में स्थायी सुधार के लिए केवल माँ को पोषण संबंधी जानकारी देना पर्याप्त नहीं माना जा सकता। इसके लिए परिवार की सहभागिता, स्थानीय एवं मौसमी खाद्य संसाधनों का पोषण की दृष्टि से बेहतर उपयोग, व्यवहार-आधारित पोषण शिक्षा, आंगनवाड़ी एवं आशा कार्यकर्ताओं का नियमित परामर्श तथा सुरक्षित खाद्य एवं स्वच्छता व्यवहारों को एक साथ बढ़ावा देना आवश्यक है। ग्रामीण समुदाय की स्थानीय परिस्थितियों, खाद्य आदतों और सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों को ध्यान में रखकर विकसित किए गए हस्तक्षेप अधिक व्यवहारिक एवं प्रभावी हो सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. शितेमी, सी., क्याल्लो, एफ. एवं कोम्बे, वाई. (2018)। 6 से 24 माह के बच्चों में पूरक आहार संबंधी व्यवहार एवं पोषण स्थितिरु एक अनुप्रस्थ वर्णनात्मक अध्ययन। (Complementary feeding practices and nutritional status of children 6 to 24 months: A cross-sectional descriptive study.) अफ्रीकन जर्नल ऑफ हेल्थ साइंसेज, 31(1), 49-50
2. मीक, जे. वाई. एवं नोबल, एल., स्तनपान अनुभाग। (2022)। नीति वक्तव्यरु स्तनपान एवं मानव दूध का उपयोग। पीडियाट्रिक्स, 150] e2022057988A Meek JY] Noble L] Section on breastfeeding- Policy statement: Breastfeeding and the use of human milk- Pediatrics- 2022(150: e2022057988- [DOI] [PubMed] [Google Scholar]

3. विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO)। (2021)। शिशु एवं छोटे बच्चों का आहार (Infant and Young Child Feeding)। विश्व स्वास्थ्य संगठन, जिनेवा। उपलब्ध <https://www.who.int/news-room/fact-sheets/detail/infant-and-young-child-feeding>
 4. फ्यूटेल, एम., ब्रॉस्की, जे., कैम्पॉय, सी., डोमेलॉफ, एम., एम्बलटन, एन., मिस, एन. एफ. एवं अन्य। (2017)। पूरक आहाररू यूरोपीय बाल गैस्ट्रोएंटरोलॉजी, हेपेटोलॉजी एवं पोषण सोसायटी (ESPGHAN) की पोषण समिति का स्थिति-पत्र। जर्नल ऑफ पीडियाट्रिक गैस्ट्रोएंटरोलॉजी एंड न्यूट्रिशन, 64(1), 119–132A DOI: 10.1097/MPG.0000000000001454A ।
 5. विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO)। (2023)। 6–23 माह के शिशुओं एवं छोटे बच्चों के लिए पूरक आहार संबंधी दिशानिर्देश (WHO Guideline for Complementary Feeding of Infants and Young Children 6–23 Months of Age, A जिनेवा:विश्व स्वास्थ्य संगठन।
 6. विश्व स्वास्थ्य संगठन एवं यूनिसेफ (WHO & UNICEF)। (2021)। शिशु एवं छोटे बच्चों की आहार पद्धतियों के आकलन हेतु संकेतक: परिभाषाएँ एवं मापन विधियाँ (Indicators for Assessing Infant and Young Child Feeding Practices: Definitions and Measurement Methods)। जिनेवा: विश्व स्वास्थ्य संगठन एवं यूनिसेफ।
 7. भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषदद्वारा राष्ट्रीय पोषण संस्थान (ICMR&NIN)। (2020)। भारतीयों के लिए पोषक तत्वों की आवश्यकताएँ: अनुशंसित आहार भत्ता (RDA) एवं अनुमानित औसत आवश्यकताएँ (EAR) (Nutrient Requirements for Indians: Recommended Dietary Allowances and Estimated Average Requirements)। हैदराबाद: राष्ट्रीय पोषण संस्थान, भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद।
 8. अंतरराष्ट्रीय जनसंख्या विज्ञान संस्थान एवं ICF (IIPS & ICF)। (2021)। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण 5 (NFHS-5), 2019–21: भारत (National Family Health Survey-5, 2019–21: India)। मुंबई: अंतरराष्ट्रीय जनसंख्या विज्ञान संस्थान।
-